सत्यापन क्रमांक :
RAJHIN/2015/60530

ओ३म्

महर्षि दयानन्द स्मृति प्रकाश

हिन्दी मासिक

वर्ष : ७ अंक : ०१ १ जनवरी २०२१ जोधपुर (राज.) पृ.:३६ मूल्य १५० र वार्षिक

सर्वहिताय परमात्मा के स्वरूप का ज्ञान कराते हुए महर्षि ने शताधिक वेद मन्त्रों का प्रार्थना व स्तुति परक अर्थ 'आर्याभिविनय' में किया है जिसे पढ़ समझकर मनुष्य परमात्मा की भक्ति, धर्मनिष्ठा और व्यवहारशुद्धि में लगे।

महर्षि दयानन्द सरस्वती प्रणीत

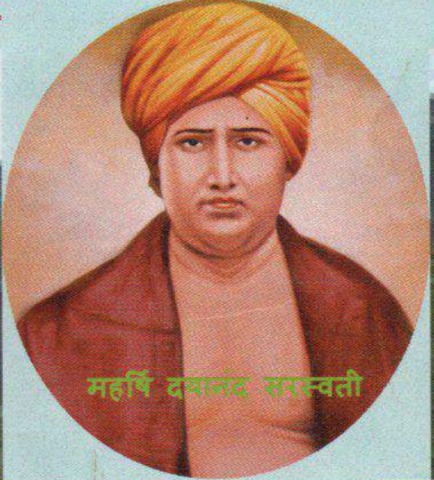

अलकनन्दा

आर्याभिविनय अवश्य पढ़ें

जो नर इस संसार में अत्यंत प्रेम, धर्मात्मा–विद्या,सत्संग, सुविचारता, निर्भयता, जितेंद्रियता, प्रत्यक्षादि प्रमाणों से परमात्मा का स्वीकार (आश्रय) करता है वही जन अतीव भाग्यशाली है, क्योंकि वह मनुष्य यथार्थ सत्य विद्या से संपूर्ण दुखो से छूट के परमानंद परमात्मा की प्राप्ति रूप जो मोक्ष– उसको प्राप्त होता है और दुख सागर से छूट जाता है! परंतु जो विषय लंपट, विचाररहित, विद्या, धर्म, जितेंद्रियता, सत्संगरहित, छल, कपट, अभिमान, दुराग्रहदि दुष्टता युक्त है सो वह मोक्ष सुख को प्राप्त नहीं होता। क्योंकि वह ईश्वरभक्ति से विमुख है। इसलिए जन्म मरण ज्वरआदि पीड़ाओं से पीड़ित होकर सदा दुखसागर में ही पड़ा रहता है। इससे सब मनुष्यों को उचित है कि परमेश्वर और उसकी आज्ञा से विरुद्ध कभी नहीं हो। किंतु ईश्वर तथा उसकी आज्ञा में तत्पर होकर इस लोक (संसार व्यवहार) और परलोक (जो पूर्वोक्त मोक्ष) इन की सिद्धि यथावत करें –यही मनुष्य की कृतकृ

महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मृति भवन न्यास के तत्वावधान में

मितिमार्गशीर्ष शुक्ल ९ बुधवार २३ दिसम्बर २0२0 को अमर शहीद कल्याण मार्ग के पथिक स्वामी श्रद्धानन्दजी महाराज का बलिदान दिवस तथा आर्यजगत् के स्वनामधन्य वैयाकरण व वेदविद् आचार्य सत्यानन्दजी वेदवागीश की प्रथमपुण्य तिथि के अवसर पर आयोजित कार्यक्रम की झलकियाँ ।

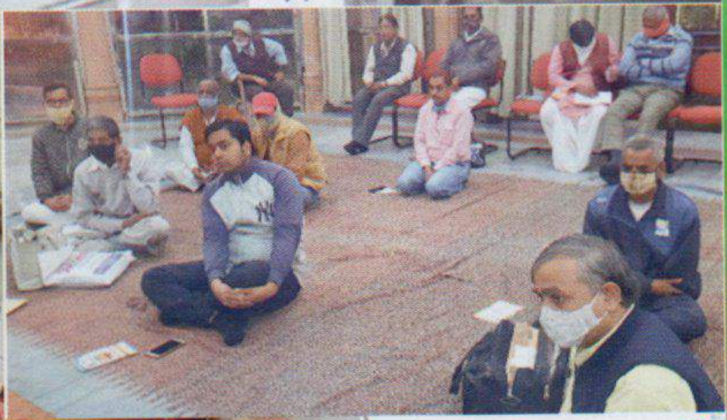

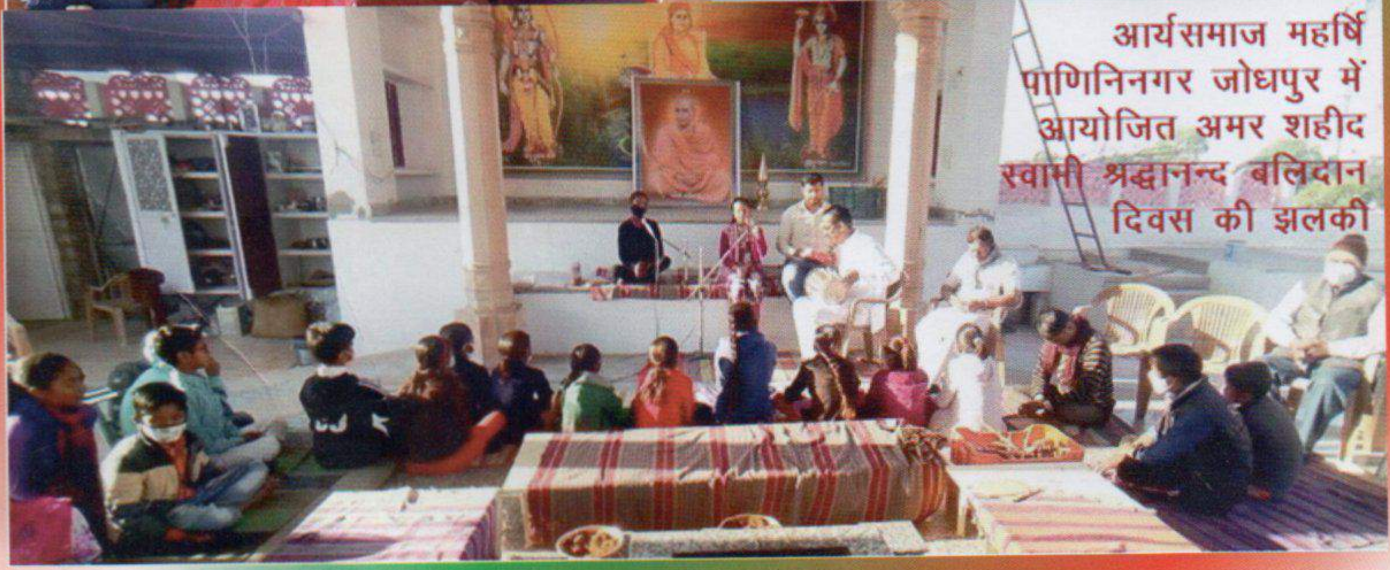

आर्यसमाज महर्षि पाणिनिनगर जोधपुर में आयोजित अमर शहीद स्वामी श्रद्धानन्द बलिदान दिवस की झलकी

कृण्वन्तो विश्वमार्यम् । -ऋग्वेद ९।६३।५

सबको श्रेष्ठ बनाओ

महर्षि दयानन्द स्मृति प्रकाश का मुख्य प्रयोजन

महर्षि दयानन्द सरस्वती के व्यक्तित्व, कृतित्व, व उनके द्वारा लिखित समस्त साहित्य तथा उनके सार्वभौमिक अद्वितीय कार्यों व सिद्धांतों का प्रचार-प्रसार, स्थापना व व्यवहार में साकार करने के लिये कार्य करना ।

महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मृति भवन न्यास, जोधपुर का मुखपत्र

महर्षि दयानन्द स्मृति प्रकाश

वर्ष : ७ अंक : १

दयानन्दाब्द : -१९७

विक्रम संवत् : माह-पौष २०७७

कलि संवत् ५१२०

सृष्टि संवत् :१,९६,०८,५३,१२१

सम्पादक मण्डल :

प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु, अबोहर

डॉ. सुरेन्द्रकुमार, हरिद्वार

डॉ. वेदपालजी, मेरठ

पं. रामनारायण शास्त्री, सिरोही

आचार्या सूर्यादेवी चतुर्वेदा

कार्यवाहक सम्पादक :

कमल किशोर आर्य

Email: sampadakmdsprakash@gmail.com

9460649055

प्रकाशक : 0291-2516655

महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मृति भवन न्यास, जसवन्त कॉलेज के पास, जोधपुर ३४२००१

लेख में प्रकट किए विचारों के लिए सम्पादक उत्तरदायी नहीं है । किसी भी विवाद की परिस्थिति में न्याय क्षेत्र जोधपुर ही होगा ।

Web.-www.dayanadsmritinyas.org.

वार्षिक शुल्क :१५० रुपये

आजीवन शुल्क : ११०० रुपये

(१५वर्ष)

अनुक्रमणिका

	क्या	कहाँ
१.	सम्पादकीय....	४
२.	मुक्ति सोपान...	८
३.	वेद-वचन.....	१०
४.	वह हमारे प्रेम को...	१२
५.	दयानन्द कौन है ?......	१३
६.	ऋषिगाथा.....	२३
७.	अथ ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका....	२६
८.	आर्यसमाज का इतिहास....	२८
९.	आर्य समाचार......	३१

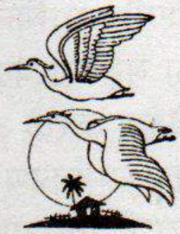

महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मृति भवन न्यास

बैंक ऑफ बडौदा खाता संख्या-01360100028646

IFSC BARB0JODHPU

यह पांचवा अक्षर जीरो है

सम्पादकीय

गतांक में कई महत्वपूर्ण विषयों पर सम्पादकीय लिखा था। किन्तु स्थानाभाव के कारण सुधी पाठकों तक पहुँच नहीं पाया। इस अंक में प्रयास कर रहा हूँ।

१. देवी अन्नपूर्णा: –हिंदू हृदय सम्राट श्री नरेंद्र मोदी ने कार्तिक पूर्णिमा को बहुत बड़ी घोषणा की कि १०० वर्ष बाद देवी अन्नपूर्णा की मूर्ति कनाडा से वापस भारत आ रही है। इसकी घोषणा देश के प्रधानमंत्री कर रहे हैं, मानो भारत की भुखमरी दूर करने के लिए देवी अन्नपूर्णा आ रही है। क्या माँ अन्नपूर्णा की मूर्ति चोरी होने से पूर्व देश में अन्न की पूर्ति कर रही थी? क्या कनाडा में यह माँ अन्न की पूर्ति कर रही थी? भ्रम को भावना मान कर पतन के मार्ग पर निरंतर जाने वाले हिन्दुओं! जागो! एक विदेशी कलाप्रेमी को मूर्ति पसंद आने की बात एक चोर ने सुनी और वह मूर्ति चुरा कर कलाप्रेमी को बेच दी और वह कलाप्रेमी उस मूर्ति को तस्करी करके ले गया! यदि इस मूर्ति में प्राण प्रतिष्ठा की गई थी तो यह प्राणित मूर्ति कहीं अपने प्राण की शक्ति तो नहीं दिखा पाई! अंधभक्त अब गाल बजाएंगे कि यह माता की महिमा है जो अपने देश वापस आ गई! एक शोधार्थी को दिखाई दे पड़ी! देखो! वैसी ही महिमा की मूर्ति किसी धूर्त के सपने में आकर कहती रही है कि मैं फलाँ जगह गड़ी हूँ। आकर मुझे निकालो और भव्य मंदिर बनाओ! वह मूर्ति स्वयं बाहर क्यों नहीं आती? गड़ी हुई दुर्दशा को प्राप्त क्यों हुई? इस पर विचार जड़ बुद्धि लोग तो नहीं कर सकते। मनुष्य के कर्म सुनियोजित रूप से जड़ पत्थर पर सजा कर उसकी झूठी महिमा बना कर व्यापार शुरु! ऐसा करने वाले लोग धूर्त और स्वार्थी होते हैं। अधिक नहीं लिखकर इतना ही लिखूंगा की इस माँ अन्नपूर्णा की मूर्ति के आने के बाद भारत माता की कोई संतान भूखे ना सोए और कनाडा में किसी को अन्न ना मिले! हर पत्थर का नाम रखकर कमाकर खाओ! खिलाने वाले आंख के अंधे बहुत है! जागो हिंदुओं! जागो! आर्यों! आपके अतिरिक्त हिन्दुओं को कौन जगाएगा! आर्यसमाजियों के साथ साथ मूर्तिभंजक कबीलाई सोच वाले म्लेच्छ, चोर और मंदिर पर ताले और सीसी टीवी कैमरे लगाने वाले, पुजारी और न्यासीगण भी जानते हैं कि मूर्ति स्वयं अपनी और अपने चढ़ावें की रक्षा नहीं कर सकती! यह बात मूर्तिपूजकों को भी समझनी चाहिए!

२. लवजिहाद कश्मीर पाकिस्तान इस्लाम :– उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा लव जिहाद के विरुद्ध बनाये कानून का मसौदा पढ़ने से पता चलता है कि यह कानून धर्मांतरण के विरुद्ध बनाया गया है। हाँ इनमें विशेष करके अनुसूचित जातियों और जनजातियों की सुरक्षा की गई है, जबरन या बहला–फुसलाकर धर्मांतरण को रोकने के आदेश दिए गए हैं।

यह सोचने की बात है कि आज के जमाने में कितने हिंदू भारत में जबरन मुसलमान बनाए जा रहे हैं! जो हिंदू मुसलमान बनते हैं, उनमें मुख्य कारक हिंदू धर्म में उनके साथ होने वाले अत्याचार और पक्षपात होते हैं। बलात् धर्म परिवर्तन तो कहीं नजर नहीं आते। एक हिंदू बेटी जब घर से अपने विधर्मी प्रेमी के साथ भागती है तो उसे भय इस्लाम की शमशीर का नहीं होता है, वरन् अपने ही माँ–बाप और भाइयों के उत्पीड़न का होता है– यह एक कटु सत्य है।

५

ऐसी स्थिति में अपने आप को ऐसा बनाना है कि लव जिहाद का भी असर ना हो। इसके लिए न तो हिंदू समाज जागरूक है, न उसे इसकी समझ है, न वह समझना चाहता है और नहीं उसके पास कोई तैयारी है। अब तो विशेष बात यह है कि लवजिहाद का जाल विशेष रूप से उन घरों को शिकार बनाने के लिए फैलाया जा रहा है जिन घरों के लोग हिन्दू धर्म प्रचार के लिए ज्यादा सक्रिय है।

कश्मीर निरंतर भारत और भारतीयों को दुखी करता चला आ रहा है। आजाद भारत में हिंदुओं को मारकर भगाया! हिंदू विरोधी कांग्रेस सरकारों से लेकर हिंदुओं के वोट से बनी सरकारें भी हिंदुओं को कश्मीर में वापस नहीं बसा पाई। हिंदूवादी पार्टी कश्मीर में सरकार का अंग बन कर भी भारत विरोध नहीं रोक पाए और कश्मीर भारत के मस्तक पर नासूर बना हुआ है। १९६५, १९७१ और कारगिल के युद्ध में हारने के बाद भी पाकिस्तान भारत के साथ निरंतर संघर्षरत है और भारत को कमजोर करने में लगा है।

१९४७ के विभाजन के बाद जो मुसलमान भारत में रहे थे, १९७० के दशक तक उनमें इस्लाम की बुराइयाँ कमतर थीं। हिन्दू रीति–रिवाज उनमें प्रचलित थे। किंतु ७० के दशक के बाद तबलीगियों ने उनका ब्रेनवाश करके जीवित बम ही बना दिया। सुनियोजित रूप से जनसंख्या विस्फोट और हिंदुओं की धार्मिक और सामाजिक कमजोरी का लाभ उठाकर विभिन्न माध्यमों से धर्मांतरण की बाढ़ आ गई। हिंदुओं के दबे कुचले वर्गों के साथ इनका गठबंधन होने लगा और हिंदू अपने चिर परिचित अंदाज में अपने पैरों पर कुल्हाड़ी मारने में तब भी मशगूल थे और आज भी हैं।

लवजिहाद हो, अन्य प्रकार से धर्मांतरण हो, कश्मीर का अत्याचार व आतंक हो, चाहे पाक के नापाक कदम! इनकी जड़ इस्लाम में है जिसको खोदकर खत्म करने का माद्दा हिंदुत्व में नहीं है। यही कारण है कि हिन्दू अपनी कमजोरियों से आसान शिकार होता हुआ बिना अपनी किलेबंदी किए छटपटाता रहा है और निरंतर घायल होता रहा है।

हिंदू समाज के लकवाग्रस्त अंगों को कोई संजीवनी तो दूर, स्नेहलेप तक नहीं लगाता। जो सक्षम हिन्दू है उनकी चिंता इतनी भर है कि मेरा नाकारा अंग मुझे पोषण देता है और वह मुझसे अलग हो रहा है। वस्तुतः हिंदू समाज का परजीवी बना हुआ प्रभावशाली भाग मद में गाफिल है और शोषित भाग जो थोड़ी सी भी जीवन की आशा में कहीं भी जाने के लिए अपना हिंदुत्व त्याग देता है, क्योंकि उसे भी कोई फर्क नहीं पड़ता।

हिंदू अन्य मतों का आसान शिकार क्यों है? इसकी और ध्यान देना अति आवश्यक है। गैर हिंदू लोग जब तिलमिलाते हैं तो उसका कारण हिंदू द्वारा उन पर किया गया हमला नहीं होता, वरन उनके हमलों से बचाव के लिए हिन्दुओं द्वारा ली गई एक करवट होती है। किंतु तिलमिलाते विधर्मी निश्चिंत होते हैं कि हिंदू समाज ने करवट ही तो ली है, पड़ा तो सोया ही है। उन्हें बस दूसरी ओर जाकर इसका शोषण करना पड़ेगा, कष्ट उनके लिए सिर्फ इतना ही है।

हिंदू समाज की इस कमजोरी को महर्षि दयानंद ने ताड़ा था और इसकी किलेबंदी मजबूत करने के लिए सत्यार्थप्रकाश के प्रथम ग्यारह समुल्लास लिखे थे और इस जाति को

अपने बचाव के लिए नखदंत दिए थे अंतिम तीन समुल्लास में।

किंतु हिंदू समाज के परजीवी लोगों ने प्रथम ग्यारह समुल्लास से कुछ सीखकर अपना भला करने की बजाय इन समुल्लासों के कारण महर्षि को अपना दुश्मन घोषित कर दिया। इन परजीवियों ने महर्षि द्वारा सत्यार्थप्रकाश के अंतिम तीन समुल्लास में दिए गए नखदंत धारण करके बचाव तो आरंभ कर दिया। किंतु यह उनका इल्जामी जवाब मात्र था कि हममें बुराई हैं तो तुम भी बुराई से सने हुए हो। ये परजीवी लोग शोषितों को बरगलाने में लगे हैं कि शोषण से छुटकारा तुम्हें हिंदुत्व से जाकर भी नहीं है अतः हमसे शोषण कराते रहो।

ये धूर्त, नास्तिक, इंद्रियलोलुप, धनलोलुप, सत्तालोलुप लोग शोषण समाप्त करना नहीं चाहते! आर्यत्त्व लाना नहीं चाहते! अपने भविष्य को जानते हुए भी ये निरंतर हिंदुओं को पतन के मार्ग पर ले जा रहे हैं कि हमारी तो कट जाएगी! आप मरे जुग पल्ले! आर्यों यह काम हमें ही करना है।

३. किसान कानून और आंदोलनः क्याहरण को स्वयंवर का नामदिया है?

लम्बे समय से चर्चा किसान कानूनों पर चल रही है। कानूनों का समर्थन और विरोध करने वाले अधिकांश लोगों ने कानूनों को पढ़ा नहीं है और इस देश के दुर्भाग्य रूपी दलीय प्रतिबद्धता के कारण समर्थन और विरोध किया जा रहा है। यदि अपने दल और अपना हित सिद्ध होता है तो देश जाय भाड़ में!— यह मानसिकता बहुत घातक है।

मेरा सभी से अनुरोध है कि विवेक के साथ इन तीनों विधेयकों को पढ़ें जो संसद की वैबसाइट पर हिन्दी में भी उपलब्ध है। कुल बीस पृष्ठों के तीन कानूनों में न्यूनतम खरीद मूल्य के नीचे की खरीद दण्डनीय हो जाये, असीमित खरीद कर जमाखोरी व मुनाफाखोरी को बढाने वाले प्रावधान वापिस हों, जिस देश की बहुत सी जनता को दो समय का खाना नहीं मिलता, वहाँ महंगाई पर नियंत्रण करने के प्रयास भी महंगाई के सौ प्रतिशत बढ़ने अर्थात् दोगुनी बढ़ने के बाद आरंभ करने के प्रावधान वापस लिए जायं और पाँच प्रतिशत महंगाई बढ़ने पर भी सरकार सख्त प्रावधान करे, एमएसपी से अधिक मूल्य पाने वाले भाग्यशाली किसानों का नाम सार्वजनिक करने के प्रावधान किए जायं तो इसमें मोदीजी और भाजपानीत सरकार की वाहवाही ही होगी।

स्पॉन्सर किसान का माल एक तिहाई पैसा रोककर उठा सकेगा। कम्पनियों की तरह क्या यही सुविधा देश के किसान को बाजार से बीज खरीदते समय उपलब्ध है कि वह बीज का दो तिहाई दाम दे और शेष दाम बीज की गुणवत्ता देखने के बाद दे। नही तो जिन्स की गुणवत्ता भी क्रय से पहले निर्धारित कर उपज उठाने से पहले किसान को पूरा दाम मिलने का प्रावधान किया जाय, तो क्या इसमें किसान का हित नहीं है?

किसी भी विशेष जिन्स की अगली फसल आ जाने पर पिछली फसल का प्रोडक्शन साइकिल समाप्त हो जाना चाहिए। 60 दिन और 90 दिन के बीज आ रहे हैं। फिर भी यदि कोई प्रोडक्शन साइकिल 5 वर्ष से अधिक है और उस दीर्घ सायकल में किसान की कोई भूमिका है, तो प्रोडक्शन साइकिल को भी परिभाषित किया जाना चाहिए और ऐसी जिन्सों को भी सूचीबद्ध किया जाना चाहिए।

6

किसान को सर्वश्रेष्ठ मूल्य दिलाने के लिए गारण्टीड दर की बात कही है, दर को एमसीएक्स नुमा इलेक्ट्रॉनिक प्लेटफार्म से जोड़ने की बात कही है, तो एमएसपी और उसके उपर अतिरिक्त दर और बोनस का प्रावधान क्या किसान विरोधी होगा?

कृषि भूमि पर बनाया गया निर्माण यदि स्पॉन्सर न हटाए तो वह भूस्वामी किसान का हो जाएगा। लेकिन उसका हटाना आवश्यक हुआ तो उसे हटाने की लागत की वसूली स्पोंसर से करने का प्रावधान नहीं है।

पीड़ित किसान को न्याय पाने के लिए न्यूनतम 132 दिन लगेंगे, यदि सभी अधिकारी यथासमय कार्य करें, तब! शिकायत और अपीलों पर निर्णय करने के लिए अवधि निर्धारित है, किन्तु निर्धारित अवधि में निवारण न हो तो जब 60 दिन में फसल देने वाले बीज उपलब्ध है तब न्यूनम 132 दिन की निर्णय अवधि बहुत बड़ी है। कानून को किसान हितैषी बनाने के लिए किसान को पूर्व भुगतान और करार से आजादी सुनिश्चित हो न कि स्पोंसर के पास किसान के पैसे रोककर, तो क्या किसान का हित नहीं होगा?

आवश्यक वस्तु (संशोधन) कानून 2020 के तहत यदि 100 प्रतिशत महंगाई बढ़ने पर कृषि उत्पाद पर कोई सीमा लागू भी की जाय तो इस कानून के तहत किए गए करार पर लागू नहीं होगी। यह भयानक प्रावधान है, जो जमाखोरी और मुनाफाखोरी को बढ़ावा देने वाला है। इससे आम जनता त्रस्त हो जाएगी। इधर कमोडिटी एक्ट में कृषि उत्पाद में 100 प्रतिशत महंगाई बढ़ने तक स्टॉक सीमा पर विचारण ही नहीं करने का प्रावधान किया गया है। फिर कोई समिति बनेगी, जो सालों विचार में लगाएगी। यह लोक कल्याणकारी नहीं है बल्कि महंगाई को दावत दे गरीबों को समाप्त या वंचित करने वाली है।

यदि इस कानून का प्रावधान ही लागू किए जाने योग्य या किसान अथवा जनता के लिए हानिकारक पाया जाय तो भी इस कानून के प्रावधान के विरुद्ध केन्द्र आदेश जारी नहीं करेगा। यह ढिठाई है या लोककल्याणकारी शासन?

अब एक साधारण भारतीय नागरिक होने के नाते मेरी छोटी सी जिज्ञासा है कि यदि कोई उद्योगपति एक किसान को वर्तमान् एमएसपी से दोगुना दाम देकर उसका उत्पाद खरीद लेगा तो मुझे किस भाव पर देगा? उस किसान के अलावा अन्य किसानों को भी वह उत्पाद किसा भाव पर दिया जाएगा? तात्पर्य यह कि किसान अपने उत्पाद के अलावा अन्य उत्पादों के लिए सागान्य नागरिक ही है। यदि एक किसान को दोगुनी कीमत देकर जमाखोरी और मुनाफाखोरी कर अन्य किसानों को भी चारगुने दाम में बेचने में किसान हित क्या है और जनहित तो है ही कहाँ ? तकनीकी रूप में भी किसान के नाम पर स्पोंसरों कम्पनियों को ही सुरक्षित किया गया है।

आप पहले तीनों कानूनों को पढ़कर मेरे उपर्युक्त कथन में झूठी बात बताएँ। यदि मैनें सत्य लिखा है तो यह भी विचारें कि इनमें प्रस्तावित सुधार से किसान और आमजन भी सुखी होंगे या दुखी। मोदी जी से हमें सुख की आशा नहीं करनी चाहिए?

—कमल

उचित पाठविधि का निश्चय करने की आवश्यकता है । मेले में सहस्त्रों गाय बिकने को खड़ी रहती है । उनमें कोई सींग मारने वाली, कोई दूध न देने वाली और कोई रोग से पीड़ित है । बुद्धिमान गोधुक उन में से किसी को हाथ नहीं लगाता । ज्ञान रूपी गाय की भी यही अवस्था है । शिक्षक किस ज्ञान को प्रचार करने के लिए स्वीकार करें ? जिस पुस्तक की भाषा में इन्द्रियों का उकसाने और बुरी कामनाओं को उत्तेजित करने का दुर्गुण है, उन्हें बुद्धिमान् साधक-सम्पन्न शिक्षक अपनी पाठविधि से पहले ही निकाल देगा । जिस वाणी से मनुष्यों में परस्पर द्वेषाग्नि प्रज्वलित हो, जिन उपन्यासों से काम चेष्टा उत्तेजित हो, जिन तुकबन्दियों से पिघल कर मनुष्य में पशु-भाव का प्रवेश हो, उनको शिक्षक पहिले त्याग दे । फिर निर्दुग्धा गाय की तरह वाणी भी निस्सार नहीं होनी चाहिए । वेद का एक २ शब्द अपने अन्दर सार रखता है । वेदानुयायी उपनिषद्कार मुनियों ने एक शब्द भी बिना प्रयोजन के नहीं लिखा । कलियुगी संस्कृतज्ञों ने ''अवच्छेदकावच्छिन्न'' के शब्द जाल में फँसा कर आर्य जाति को नास्तिकपन के गढ़े में गिरा दिया । ईश्वर-भक्ति और उपासना से विमुख करा कर इसी शब्दजाल में जीवों को भ्रमायुक्त कर उन्हें ब्रह्म का धोखा दिलाया ।

इनके अतिरिक्त जो वाणी, मनुष्य में अभिमान तथा आत्मश्लाघा का कुसंस्कार डाल कर उसका सर्व नाश करने वाली हो, रुग्ण गौ की तरह उससे भी बचना चाहिये। जिस प्रकार दूध के साथ २ रुग्ण गौ का विष, दूध पीने वालों मैं फैल कर उन सब का नाश करता है उसी प्रकार विष युक्त वाणी, सुनने वालों में फैल कर उन का नाश कर देती है ।

शिक्षक का पद जितना ऊँचा है, उसके लिये साधन भी उतने ही कठिन हैं । वे साधन कैसे निभ सकें ? जीवात्मा की अल्प शक्ति इस बड़े बोझ को उठाने के योग्य नहीं । इसलिये उस महती शक्ति का सहारा लेना चाहिये जिस के आश्रित को क्लेश की कोई भी आंधी डगमगा नहीं सकती । जिसके पास ऐश्वर्य है वही दूसरों को ऐश्वर्यवान् बना सकता है । जिसके पास अपना कुछ नहीं वह किसी को क्या दे सकता है ? ''नंगी क्या नहावे, क्या निचोड़े ?'' जिन्होंने अपनी अल्पज्ञता को भुला कर दूसरों की पथ प्रदर्शकता का बोझ अपने ऊपर लिया, उन्होंने शिष्य का और अपना दोनों का नाश कर लिया । परन्तु जिन्होंने वाणी के स्वामी सर्वज्ञ पिता से ज्ञान लाभ करके जो कुछ भी प्राप्त किया उसे ज्यों का त्यों शिष्यों के आगे रख दिया, उन्होंने अपने शिष्यों का और अपना दोनों का कल्याण करके जीवन का उद्देश्य पूर्ण किया । शिक्षक को परमात्मा से प्रकाश लेना चाहिये । तब उस प्रकाश से प्रदीप्त होकर वह अपने शिष्यों को प्रकाश दे सकता है । उस समय उसे बल लगाने की आवश्यकता न होगी, उसका जीवन, उसका रोम २ स्वयं बोलेगा और बिना परिश्रम के ही शिष्यों के अन्दर विद्या रूपी सूर्य के प्रकाश का संचार होगा । धन्य है वह जाति, और धन्य है वह देश, जहाँ पर इस प्रकार की गुरु शिष्य के सम्बन्ध द्वारा शिक्षा होती है ।

मुक्ति-सोपान

चौथा सोपान —स्वामी श्रद्धानन्दजी

इस अमर धेनु को कैसे दुहें ?

उपह्वये सुदुघां धेनुमेतां सुहस्तो गोधुगुत दोहदेनाम् ।

श्रेष्ठं सवं सविता सविपन्नोभीद्धो धर्मस्तदु पु ! प्र वोचम् । (ऋ. १।१६४।२६)

"इस भली प्रकार दुही जाने वाली धेनु को मैं निपुणा हाथों वाला गोधुक् स्वीकार करूँ और उत्तम ऐश्वर्य का देने वाला हम में इस दोहने की विद्या का सामर्थ्य उत्पन्न करे । जिससे मैं सर्वतः प्रदीप्त से प्रकाशित होकर उस विद्या को भली प्रकार कहूँ ।"

'धेनु इति वाङ्.नाम सुपठितम्" नैघण्टुक काण्ड अध्याय २ खण्ड २३ में धुनु को वाणी के अर्थ में लिखी है । यहाँ पर गा, गौः भी वाणी अर्थ में प्रयुक्त है । दुही जाने वाली वाणी ही है । जब तक ज्ञान, आत्मा और मन के अन्तर्गत ही रहता है, तब तक उसका बाहर प्रचार नहीं हो सकता । ज्ञान का प्रसारण वाणी द्वारा ही होता है । दुग्ध की प्राप्ति के लिए दो बातों की आवश्यकता हैं, एक गौ सुशीला सुगमता से दुही जाने वाली हो और दूसरे यह कि दोहने वाला सुहस्त अर्थात् दोहने में निपुण हो ! इसी प्रकार वाणी रूपी धेनु से पूरा लाभ उठाने के लिये पहली आवश्यकता यह है कि ज्ञान का उल्लेख ऐसी भाषा में हो जिस में तत्वज्ञान की प्राप्ति सुलभ हो सके, और दूसरे उसमें से तत्व निकालने वाला जिज्ञासु ऐसा निपुण हो कि दूसरों तक उस के भाव को आसानी से पहुँचा सके । वेद स्वयं इस सच्चाई का प्रमाण है । जहाँ वैदिक भाषा सरल से सरल और सब प्रकार के शब्द जाल से मुक्त है वहाँ उसका आशय सदा ही उच्च रहता है । उस आशय को दूसरों तक पहुँचाने वाला ही यदि सुहस्त, योग्य, हो तभी वैदिक-सत्य का प्रचार होता है ।

धर्मोपदेशक की तरह शिक्षक का पद भी बहुत ऊँचा है । जितना शिक्षक का पद ऊँचा है उतना ही उस पद तक पहुँचने के लिये तैयारी अधिक करनी पड़ती है । शिक्षक के लिये कवि की तरह, इतना ही प्रर्याप्त नहीं कि पूर्व योनि के उत्तम संस्कारों सहित जन्म ले, प्रत्युत कुछ और भी आवश्यक है । असीलसे असील गाय से शुद्ध, स्वास्थ्यप्रद दूध प्राप्त करने के लिये भी दोहने की विद्या में बड़े परिश्रम की आवश्यकता होती है । तब वेद रूपी ज्ञान को दोह कर मक्खन निकालने के लिये क्या उच्च साधनों की आवश्यकता न होगी ? शिक्षक को पहले स्वयं अपने अंग प्रत्यंगों को वश में करना चाहिए, उसे बनावटी नहीं, अपितु स्वाभाविक नट बनने की आवश्यकता है । इस प्रकार साधन सम्पन्न हो कर ही उसे मैदान में उतारना चाहिए ।

साधन सम्पन्न विद्वान् ही पता लगा सकता है कि सरलता से दुहे जाने पर अमृत मय फल की प्राप्ति किस वाणी से हो सकती है जिसको वह संसार के कल्याणार्थ फैलावे । शिक्षा देने से पूर्व शिक्षक के लिए

वेद-वचन

राक्षसों को मार भगाओ

उद्वृह रक्षः सहमूलमिन्द्र वृश्चा मध्यं प्रत्यग्रं श्रृणीहि ।

आ कीवतः सललूकं चकर्थ ब्रह्मद्विषे तपुषिं हेतिमस्य ।। ऋग्वेद-३।३०।१७

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** दुष्ट पुरुषों के नाशकर्त्ता ! आप **(उत्)** उत्तमता के साथ **(वृह)** सुख-वृद्धि करो। **(सहमूलम्)** जड़सहित **(रक्षः)** बुरे आचार को **(वृश्च)** तोड़ो **(अस्य)** इसके ऊपर **(तपुषिम्)** प्रतापयुक्त **(हेतिम्)** वज्र को फेंकने के इसके **(मध्यम्)** मध्य में उत्पन्न हुए और **(अग्रम्)** अग्र भाग के **(प्रति)** प्रति **(श्रृणीहि)** नाश करो तथा **(ब्रह्मद्विषे)** ब्रह्म-परमात्मा व वेद के लिए द्वेष से वर्त्तमान **(सललूकम्)** अत्यन्त लोभी **(कीवतः)** कितनों [अनेक] को **(आ चकर्त)** सब प्रकार काटो ।

भावार्थः- मनुष्य को चाहिए कि कभी भी धार्मिक पुरुषों के ऊपर शस्त्रों का प्रहार न करें और दुष्ट पुरुषों को शस्त्रों से मारे बिना न छोड़ें, ऐसा न करने से सब प्रकार सुख की वृद्धि होवे ।

शिल्प-कला

सुनावमा रुहेयमस्रवन्तीमनागसम् ।

शतारित्राᳫ स्वस्तये ।। यजु.-२१।७।।

पदार्थः- हे मनुष्यो ! जैसे मैं **(स्वस्तये)** सुख के लिए **(अस्रवन्तीम्)** छिद्रादि दोष वा **(अनागसम्)** बनावट के दोषों से रहित **(शत+अरित्राम्)** अनेक लंगरों वाली **(सुनावम्)** अच्छी बनी नाव पर **(आ रुहेयम्)** चढ़ूँ, वैसे इस पर तुम भी चढ़ो ।

भावार्थः- इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमा अलङ्कार है । मनुष्य लोग बड़ी नावों की अच्छे प्रकार परीक्षा करके और उनमें स्थिर होके समुद्र आदि के पारावार जाएँ । जिनमें बहुत लंगर आदि होवें, वे नावें अत्यन्त उत्तम हों ।

सोम से वृष्टि

इन्दुर्वाजी पवते गोन्योघा इन्द्रे सोमः सहः इन्वन्मदाय ।

हन्ति रक्षो बाधते पर्यरातिं वरिवस्कृण्वन् वृजनस्य राजा ।।५४०।।

पदार्थ :- (गोन्योघाः) गो-रसों के समान मधुर आनन्दरसों के समूह का स्वामी **(वाजी)** वेगवान् **(इन्दुः)** तेजस्वी और रस से आर्द्र करनेवाला परमात्मा **(पवते)** उपासक के अन्तःकरण को पवित्र मानता है। **(सोमः)** शान्तिदायक वह परमात्मा **(मदाय)** आनन्द देने के लिए **(इन्द्रे)** जीवात्म में **(सहः)** बल को **(इन्वन्)** प्रेरित करता है । **(तृजनस्य)** बल का **(राजा)** राजा वह परमात्म, अपने उपासको को **(वरिवः)** शुभगुणों का अथवा योग-सिद्धियों का ऐश्वर्य (कृण्वन्) प्रदान करता हुआ (रक्षः) पापरूप राक्षस को **(हन्ति)** विनिष्ट करता है, **(अरातिम्)** अदानभाव को (परि बाधते) सर्वथा दूर कर देता है ।

भावार्थ :- परमेश्वर उपासकों को गाय के दूध के समान मधुर आनन्दरसों को, आत्मबल को,सद्गुणों को एवं अणिम आदि योग सिद्धियों को प्रदान करता हुआ और उनके पापरूप शत्रु का संहार करता हुआ उन्हें विजयी बनाता है । ।।८।।

उसे कौन जानता है

कस्तं प्र वेद क उ तं चिकेत यो अस्या हृदः कलशः सोमधानो अक्षितः ।

ब्रह्मा सुमेधाः सो असिम्न् मदेत ।। -९।१।६

पदार्थः- (कः) कौन पुरुष **(तम्)** उस परमेश्वर को **(प्रवेद)** अच्छी प्रकार जानता है **(कः उ)** और किसने **(तम्)** उसको **(चिकेत)** समझा है । **(यः)** जो परमेश्वर **(अस्याः)** इस वेदवाणी के **(हृदः)** हृदय का **(कलशः)** कलश **(अक्षित)** अक्षय **(सोमधानः)** अमृत का पात्र है **(सः)** वह **(सुमेधा)** सुबुद्धि **(ब्रह्मा)** ब्रह्मज्ञानी, वेदवेत्ता **(अस्मिन्)** इस परमेश्वर में **(मदेत)** आनन्द पावे ।

भावार्थः- चतुर ब्रह्मज्ञानी पुरुष परमेश्वर और उसकी वेदवाणी का तत्त्व जानकर प्रसन्न होत हैं।

— : आर्य परिवार की वधु चाहिए : —

जोधपुर निवासी २६ वर्षीय, बी.टैक, कद ५ फीट ७ इंच, राजकीय सेवा में कार्यरत आर्य युवक हेतु आर्य परिवार की संस्कारित सुशिक्षित वधु चाहिए।
संपर्क- डॉ. पं. रामनारायण शास्त्री चलभाष : 9413610928, 9414478296

वह हमारे प्रेम को जानता है

-डॉ. रामनाथ वेदालंकार

दधन्वे वा यदीमनु, वोचद् ब्रह्माणि वेरु तत् ।

परि विश्वानि काव्या, नेमिश्चक्रमिवाभवत् ।। ऋग् २.५.३

ऋषि : **सोमाहुति : भार्गवः** । देवता **अग्निः** । छन्दः **अनुष्टुप्** ।

[प्रभु का भक्त] **(ईम्)** इस [अग्नि प्रभु] को **(अनु)** लक्ष्य करके **(यत्)** जिस [प्रेम और भक्ति] को **(दधन्वे)** धारण करता है, **(वा)** और **(ब्रह्माणि)** वेदमन्त्रों को **(वोचत्)** उच्चारण करता है, **(तत्)** उसे [वह प्रभु] **(वेः उ)** जानता ही है । [वह] **(विश्वानि)** समस्त **(काव्या)** काव्यों को **(परि-अभवत्)** व्याप्त किये हुए है, **(इव)** जैसे **(नेमिः)** परिधि **(चक्र)** पहिए को [व्याप्त किये होती है] ।

भक्त अपने प्रभु के प्रति ज्यों ही हृदय में प्रेम और भक्ति के भावों को धारण करता है, त्यों ही प्रभु को उसके भाव ज्ञात हो जाते हैं । वे पहले से ही हमारे हृदयों में बैठे हुए हमारे प्रत्येक भाव के साक्षाद्-द्रष्टा बने हुए है । कई बार लोग छद्म-भक्त बनकर संसार को और परमात्मा को छलना चाहते हैं । कुछ समय के लिए वे संसार को भले ही छल लें । यद्यपि अन्त में उनका असली रूप सब पर प्रकट हो जाता है, पर सर्वज्ञ परम प्रभु को वे नहीं छल सकते । साथ ही प्रभु-प्रेमी के हृदय में उत्पन्न प्रेम को संसार भले ही बहुत समय तक न जान पाये, पर प्रभु से उसका प्रेम छिपा नहीं रहता । वाणी द्वारा स्तुति-परक वेदमन्त्रों के उच्चारण से पूर्व भी प्रभु हृदयस्थ प्रीति को जानने हैं, वाणी द्वारा स्तुति-गान करने के पश्चात् तो जानते ही हैं । किन्तु वाणी द्वारा स्तुति-गीत गानेवाले भी सभी सच्चे प्रभु भक्त नहीं होते । दंभी और सच्चे दोनों स्तोताओं को प्रभु उनके असली रूप में पहचानते हैं । भक्त पर यदि कोई विपदाएँ आती हैं, तो प्रभु ही उसे धीरज और सहन-शक्ति प्रदान करते हैं ।

अग्नि प्रभु समस्त स्तोत्र-काव्यों में, समस्त वैदिक सूक्ति-गीतों में ऐसे ही व्यापे हुए हैं, जैसे रथके पहिए को नेमि चारों ओर से व्यापे होती है । सब वेदमन्त्र प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्रभु का ही गुणगान कर रहे हैं । इसीलिए वेद स्वयं कहते हैं कि वेद पढ़ कर भी जिसने प्रभु को नहीं जाना उसका वेद पढ़ना निरर्थक है-**यस्तन्न वेद किमृचा करिष्यति** । मानव-रचित काव्यों में भी वे ही काव्य कहलाने योग्य हैं, जिनमें प्रभु का वास है, जो प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्रभु के सन्देश को सुनाते हैं । किसी भी रस का काव्य हो, यदि उससे प्रभु का सन्देश मुखरित नहीं होता, तो वह काव्य नहीं है । इसीलिए काव्य- शास्त्रियों ने काव्य का प्रयोजन बताते हुए कहा है कि काव्य से धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष में वैचक्षण्य होता है ।

आओ, हम प्रभु के प्रति हृदय में भक्तिभाव को धारण करें, वाणी से प्रभु-स्तुति के गीत गाएँ और उन्हीं काव्यों का अध्ययन, अध्यापन तथा प्रचार करें जिनमें प्रभु चक्र में नेमि के समान परिव्याप्त हैं ।

-वेदमञ्जरी से

दयानंद कौन है

(वैश्विक चिंतक)

—कमल किशोर आर्य

एक बहुत ही सुंदर और सुप्रसिद्ध संस्कृत उक्ति है: —

अयं निज परो वेति गणना लघु चेतसाम्।
उदार चरितानाम् तु वसुधैव कुटुंबकम्।।

यह 'वसुधैव कुटुंबकम्' भारत के चिंतन की विराटता बताता है। विश्व में अन्यत्र कहीं भी इसकी ध्वनि सुनायी नहीं देती। यद्यपि आजकल 'ग्लोबल पॉलिसी' या वैश्विकनीति के नाम पर बहुत से सिद्धांत, संगठन और समझौते उपलब्ध हैं। किंतु उनके पीछे वस्तुतः विकसित देशों या बहुराष्ट्रीय कंपनियों द्वारा शेष विश्व का शोषण ही निहित है और इस वैश्विकता की आड़ में वे अन्य देशों में शोषण करने का अधिकार प्राप्त करना चाहते हैं, विश्वहित की बात उन में कहीं भी नजर नहीं आती।ये संगठन सामूहिक रूप से कार्य नहीं करते, वरन्इन संगठनों के प्रत्येक सदस्य अपने हित के विषय में जागरूक रहकर संगठन के माध्यम से अपना अधिकतम हित सुनिश्चित करना चाहते हैं, जो वस्तुतः वैश्विकता के नाम पर एकांगता ही है। 'वसुधैव कुटुंबकम्' का नाद करोड़ों वर्षों तक विश्व में गुंजाने वाले भारत की स्थिति तो और भी बदतर है, बल्कि विश्व में सर्वाधिक बदतर है। विश्व में मेरी जानकारी में अन्य कोई भी ऐसा देश नहीं है जो भौगोलिक, सामाजिक, साम्प्रदायिक, आर्थिक, राजनैतिक, वैचारिक आदि आदि रूपों में भारत जितना अधिक विभाजित हो, वैमनस्य युक्त हो। हर क्षेत्र में संकीर्णता सिर चढ़ कर बोल रही है। 'वसुधैव कुटुंबकम्' का नाद गुंजाने वाले लोग विश्व तो दूर अपने परिवार को भी परिवार मानना भूल गए। राम मंदिर ट्रस्ट में हिस्सेदारी के लिए विभिन्न सम्प्रदाय के सन्तों में हुआ वैमनस्य धर्म के झण्डाबरदारों की मानसिकता बताता है। उनकी शिक्षा से उनके अनुयायी क्या बनेंगे, हम कल्पना कर सकते हैं। पूर्वोत्तर के लोग स्वामी रामदेव को 'ब्लडी इण्डियन' कहते हैं। दक्षिण भारतीय राजनेता उत्तर भारतीयों को, राष्ट्रभाषा को शत्रु घोषित करते हैं। क्षेत्रीय पार्टियाँ राष्ट्रीय पार्टियों को बाहर की गंदगी बताते हैं। शासकीय सहायता से चल रहे शिक्षा संस्थानों में अलगाववाद और दकियानूसी साम्प्रदायिक शिक्षा संवैधानिक अधिकारों के नाम पर दी जाती है। स्वयं को मूल भारतीय संस्कृति के संवाहक कहने वाले भाई अपने ही भाई को अपना नहीं मानता, सास बहू परस्पर एक दूसरे को शत्रु मानतीं हैं, दूल्हे बिकते हैं, कन्या के जन्म से ही पिता चिंतित हो जाता है। वृद्ध माता पिता वृद्धाश्रमों में रहते हैं, नवजात सन्तानें कूड़े के ढेर पर फैंक दी जातीं हैं। भाव कचरे के ढेर में फैंक दिए जाते हैं। कहीं भी परिवार दिखायी नहीं देता।

विश्व में कुछ हजार वर्षो के मानव इतिहास का पुनरावलोकन करें तो स्पष्ट होगा कि जनसंख्या विस्फोट से कुछ शताब्दियों पूर्व जब जनसंख्या कम थी, तो विभाजन कम था। जीवन में भाांति, संतोष और स्थिरता थी। किन्तु लगभग डेढ़ सहस्राब्दी से जारी जनसंख्या विस्फोट के बाद बढ़ती जनसंख्या के बाद भी मानव का विभाजन लधुतर समुच्चयों में होता जा रहा है। आर्यसमाज के चिंतन से परिचित पाठक इसका विश्लेषण कर इसे वेद की उपेक्षाजनित वेदना बताएंगे ही, इसलिए मैं भी यहाँ अनावश्यक विस्तार नहीं दूंगा। किन्तु इतना निवेदन अवश्य करूंगा कि इस समय बहुत से देशों में इतनी जनसंख्या एक ही मत मानने वालों की है, जितनी कि चक्रवर्ती आर्य राजाओं के समय पूरे आर्यावर्त्त की नहीं थीं। एक ही मत को मानने वाले राष्ट्र के लोग जब शरणार्थी बनकर दूसरे राष्ट्रों को पलायन करने लगें, तो उस मत के खोखलेपन को समझ लेना चाहिए और यही शरणार्थी जब अपने

शरणदाता देश का ही अहित अपने संप्रदाय के नाम पर करने में संलग्न हो जायं तो उस मत की घातकता को सिद्ध ही समझ लेना चाहिए। दूसरों से पहले उस मत के मानने वालों को, उन शरणार्थियों को, उस मत की घातकता और निरर्थकता को समझ लेना चाहिए, जिसके मानने वालों ने ही उन्हें शरणार्थी बनने को बाध्य किया। इन एकाधिक कबीलाई मतों के कबीलाई हत्याकाण्डों से मध्ययुग तो पीड़ित रहा ही है, आधुनिक समय में भी मिलीशियायी युद्ध कोई अधिक पुरानी बात नहीं है, बल्कि अब भी जारी है। चाचाजात मत होने पर भी उनमें संवाद नहीं होता है और होता भी है तो सत्य की स्वीकृति का साहस न होने से और स्वमत में सत्य संदिग्ध होने से निर्णायक वार्ता में नहीं बदल सके और न ही बदल पायेंगे।

किन्तु यह परनिन्दा सुख का विषय हमारे लिए नहीं है। पहाड़ पर लगी आग देख रहे हम स्वयं अपने पैरों में लगी आग नहीं देख रहे। 'वसुधैव कुटुंबकम्' का नाद देने वाली संस्कृति के मज्जा, अस्थियाँ, मांस, और खाल ही नहीं एक एक रोम तक बिखरे पड़े छिपकली की अलग हुई पूँछ की तरह तड़पते हुए पूरे भारीर का भाग बनने को व्याकुल हैं। लेकिन इस विच्छेदन से निःसृत रक्त और पस को अपना भोज्य बनाए राक्षस वृत्ति के लोग निरन्तर विच्छेदन में ही संलग्न है।

ऐसी स्थिति में जहाँ समाज में सभ्यता लोप हो रही है, मैं सभ्य समाज की बात कर रहा हूँ। सभ्य समाज में अनुदात्त भावों को कोई स्थान नहीं है।अनुदात्त भाव वे है जो मनुष्य और जानवर के बीच का अंतर कम करते हैं, मनुष्य को जानवर बनाते हैं, व्यक्ति, परिवार, समाज और राष्ट्र– सबके लिए घातक होते हैं, कुछ का भला और अधिकांश का बुरा करते हैं, जिनके वशीभूत होकर मानव वे कार्य दूसरों के प्रति करने लगते हैं, जो वे स्वयं अपने प्रति किसी दूसरे के द्वारा किए जाने को अनुचित मानेंगे, मानव को मानव से दूर करने वाले भयानक भाव हैं ये। काम, क्रोध, मोह, मद,मात्सर्य, लोभ, हिंसा, असत्य, अज्ञान, अन्याय, अभाव, संकीर्णता और भेदभाव वाले विचार कभी भी किसी को उदात्त नहीं रहने देते। ये सब दुर्गुण की श्रेणी में आते हैं, जो मनुष्य को जानवरपन की ओर ले जाते हैं। इनसे अल्प समय के लिए कुछ लोगों की संकीर्ण मनोवृत्तियों की संतुष्टी हो सकती है, सुख तो किसी को नहीं मिल सकता। उलटे इन सब से सम्पूर्ण मानव समाज की भी और एक व्यक्ति के रूप में प्रत्येक मनुष्य की हानि भी होती है। सिर्फ दुर्जन और स्वार्थी ही इससे विरुद्ध मत रख सकते हैं। ये दुर्गुण मनुष्य के मूल चिंतन के दूषित होने से आते है।

जीवन के बहुत से आयाम है– धार्मिक, आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक, व्यवसायिक, शैक्षिक आदि आदि। किंतु मनुष्य का मूल चिंतन इन सभी आयामों को प्रभावित करता है। यह मूल चिंतन जिस प्रक्रिया से उदात्त बनता है, वह प्रक्रिया ही वस्तुतः हितकारिणी शिक्षा कहलाती है और ऐसी शिक्षाएं देने वाले ग्रंथ को हम हितकारी ग्रंथ कह सकते हैं,ऐसे उपदेश करने वालों को हितकारक और इस शिक्षा को मानने वाले सज्जन कहला सकते हैं। उदात्त मूल चिंतन से ही परिवेश पावन, श्रेयस्कर, सभ्य और श्रेष्ठ बन सकता है, जीवन का प्रत्येक आयाम उदात्त हो जाता है।

किंतु इस संसार में वैश्विकता तो बहुत दूर की बात है संपूर्ण विश्व को कुटुंब मानने की बात कोसों दूर है। उल्टे संकीर्ण स्वार्थों के लिए ऐसे ही दुर्गुणों को पालते हैं, उनके आधार पर संगठन बनाते हैं और उसे धर्म का नाम देते हैं। श्रद्धेय स्वर्गीय डॉक्टर धर्मवीर जी कहा करते थे कि जब तक दुनिया में मूर्ख बनने वाले लोग मौजूद हैं, मूर्ख बनाने वाले उसका लाभ उठाते रहेंगे और दुनिया को नर्क बनाते रहेंगे। विश्व की वर्तमान दुरवस्था को देखकर हम जान सकते हैं कि मूर्ख बनाने वाले लोग कितने हैं और उतनी ही मात्रा में भ्रमित किए जा सकने वाले लोग उनके पीछे लगे हुए हैं। प्रत्येक मत संप्रदाय के लोग अपने मतवालों को मृत्यु के उपरांत स्वर्ग प्राप्त कराने की गारंटी देते हैं, अन्य मत में निस्सारता

मानते हैं। इतना ही नहीं ईसाई और इस्लाम जैसे मत तो अपने से अन्य मान्यताओं को धारण करने वाले लोगों को सहन भी नहीं करते और उन्हें मार डालने की आज्ञा तक देते हैं। ईश्वर के प्रति तज्ञता प्रकट करने के नाम पर निरीह जीवों का गला काट देने वाले लोग, सुहानी सुबह की शुरुआत मूक प्राणियों के करुण क्रंदन से करने वाले लोग भी स्वयं को दयालु कहते हैं। सत्य के नाम पर अंधविश्वासों और मिथ्या धारणाओं को पालते हुए उन पर विचार करने को भी पाप समझने वाले लोग स्वयं को बुद्धिमान और सभ्य कहते हैं। सर्वव्यापक, सर्वशक्तिमान, सर्वज्ञ परमात्मा को सिर्फ साकार क्षुद्र रूप में ही नहीं, वरन् पत्थर और धातु जैसे निर्जीव और जड़ पदार्थों को ईश्वर मानते हैं। अपने बनाने वाले का सत्य रूप निराकार और कण–कण में व्यापक मानने के बाद भी उसे देखने की झूठी इच्छा करता है। वह अच्छी तरह जानता है कि वह स्वयं परमात्मा की रचना है, किंतु अपनी बनाई रचना को परमात्मा बताकर परमात्मा का अपमान करता है, तो भी लोग सिर झुकाते हैं। अपनी मूर्खता को, अपनी नासमझी को, अपने मिथ्यात्व को भावना और श्रद्धा का नाम देता है। हिंदू, मुसलमान, सिख, ईसाई, पारसी, बौद्ध, जैन सहित कोई भी मत संप्रदाय अपने झूठ को झूठ मानने को तैयार नहीं। झूठ को छाती से लगाने की यह प्रवृत्ति जब मनुष्य की मूल प्रवृत्ति बन जाती है तो जीवन के प्रत्येक आयाम में, प्रत्येक क्षेत्र में उसे झूठ अपनाने से रोकती नहीं है, वरन् कई बार झूठ अपनाने और सत्य को त्यागने को बाध्य भी करती है। इसी प्रवृत्ति का परिणाम खंड खंड में बँटी मानवता है।

सब जानते हैं कि वे झूठ को अपनाए हुए हैं, किंतु स्वार्थ, भय और लज्जा के कारण सत्य को हृदयंगम करने से भयभीत होते हैं। अभी तो दुनिया में कोई भी मत बहुमत में नहीं है, अर्थात् उसके अतिरिक्त अन्य मतों के अनुयायियों की कुल संख्या उसके मत के अनुयायियों से अधिक है, किंतु आश्चर्य है कि वह उन्हें झूठा मानता है। इस दृष्टि से हर एक मत झूठा हुआ। दूसरे शब्दों में यह कहें कि अपने मत से अधिक लोगों को झूठा मानकर वह यह अनुभव क्यों नहीं करता कि संख्या से सत्य का निर्धारण नहीं होता! सत्य का निर्धारण तो तर्क, युक्ति और प्रमाण से ही होता है, जिसके लिए विद्या और विवेक चाहिए। किंतु प्रिय लगने वाले झूठ को छोड़ देने वाले और सत्य पालन में कष्ट होने पर भी श्रेयस्कर जानकर सत्य को सीने से लगा लेने वालों का बोलबाला होता तो आज दुनिया की दुर्दशा ना होती।

लगभग साढ़े पाँच हजार वर्ष पूर्व दुर्योधन जैसा राजा घोषित करता है कि मैं धर्म को जानता हूँ लेकिन उसमें मेरी प्रवृत्ति नहीं होती और मैं अधर्म की हानियाँ भी जानता हूँ किंतु उनसे निवृत्ति नहीं होती। एक योद्धा की यह दयनीय अवस्था कि वह स्वयं की बुराई से नहीं लड़ सकता! ऐसे हीनबुद्धि को दंड देने का प्रथम कर्तव्य माता–पिता और कुल के वृद्धजनों का था, जिन्होंने उसका पालन किया। जिन महारथियों और अतिरथियों के तीर अपने प्रिय और धर्म पर आरूढ़ पांडवों की ओर चले, उनके तीर अपने प्रिय किंतु दुष्ट कौरवों की ओर नहीं चले! यह उसी घातक मानसिकता को दर्शाता है जो आज भी प्रचलित है और जिसके वशीभूत हुए माता–पिता भाई और बहनें अपने बलात्कारी पुत्र और भाई को बचाने में तन–मन–धन जी जान से लगाते हैं, किंतु अपने घर की महिला से यदि कोई अशिष्टता भी कर ले तो उसके मरण की कामना करते हैं। कहाँ रह गया वसुधैव कुटुंबकम? हाँ! आप यह संतुष्टि कर सकते हैं कि यह परिस्थितियाँ सिर्फ भारत में नहीं, वरन् पूरे विश्व में व्यापक हैं। किंतु बुराई की व्यापकता से आप अपनी बुराई को उचित नहीं ठहरा सकते और ना ही ऐसा करना समझदारी की बात कही जा सकती है। इस संपूर्ण विश्व की मानवता पर छाये इस संकट को दूर करने का उपाय तभी हो सकता है, जब कोई उपाय जाने!

स्मझना चाहें तो बात बहुत छोटी सी है कि जिस समाज का निर्माण हम करेंगे, हम और हमारे स्वजन उस समाज से बाहर निर्वाह नहीं कर सकते। हाँ सत्ता, सामर्थ्य और, संगठन तो नहीं, किन्तु

गिरोह के दम पर कुछ लोग स्वयं गलत मार्ग पर चलकर सही मार्ग पर चलने वालों को पीड़ित करते हुए सुरक्षित रह सकते हैं। किंतु अपना सामर्थ्य सदैव स्थिर नहीं रहता या दूसरों का सामर्थ्यभी बढ़ सकता है! उस स्थिति में क्या होगा—इसकी एक झलक उत्तर प्रदेश में विकास दुबे ने दिखाई थी। अब तक फिल्मों में दिखाई जाने वाली कहानी धरातल पर आई थी! किंतु ऐसा नहीं लगता कि इस घटना से किसी ने कोई सबक लिया हो!

काम के वशीभूत महाराज शांतनु देवव्रत को पीड़ित कर गए। अपने पिता को काम से दूर कर धर्म की ओर प्रेरित करने की बजाय उसकी पूर्ति का साधन बने देवव्रत ने अपनी योग्यता से राज्य को वंचित किया! अपने मोह और लोभ के वशीभूत निशादराज ने देवव्रत जैसे सुयोग्य राजा से एक राज्य को वंचित किया। काम, क्रोध, लोभ, मद और मात्सर्य से ग्रस्त दुर्योधन ने महाभारत की भूमिका बांध दी और भारत को ही नहीं संपूर्ण विश्व को पतन के गर्त में ढकेल दिया। आज भी किसी न किसी रूप में दुर्योधन जैसे अपने पुत्र का हित साधने के लिए 'धृतराष्ट्र', 'भीष्म', 'कृप' और 'द्रोण' हर शाख पर बैठे अपनों के पाप की रक्षा को धर्म का नाम दे रहे हैं। दूसरों के धर्म को पाप घोषित कर रहे हैं। अपनेपन की सीमा सिकुड़ती चली जा रही है। हाथरस या बंदायुँ की पीड़ित बेटी के अपराधियों के माँ—बाप इन बेटियों को अपने परिवार की मान लेते हैं तो क्या वे अपने पुत्रों को बचाएंगे? और यदि बचा रहे हैं तो कहाँ गया 'वसुधैव कुटुंबकम'? एक कन्या के विवाह में स्वजन बनकर सैंकड़ों जाते हैं। नहीं बुलाए जाने पर उलाहना देते हैं। उन्हीं सम्मिलित लोगों में कोई उसी कन्या से अनाचार करें तो अनाचारी का परिवार उसी स्वजन कन्या के विरुद्ध अपने परिजन की रक्षा को तन—मन—धन लगाएगा। स्वजन होने का परिमाप क्यों सिकुड़ जाता है?इस विषय विस्तार को यहीं रोकते हुए इतना सा निवेदन है कि जब भाई भाई के बीच मुकद्दमे या लट्ठ चलने लगे तो उन कारकों की निस्सारता को समझ लेना चाहिए, जो मनुष्य के चिंतन को संकीर्ण कर उसके परिवार को छोटे से छोटा बनाते चली जा रहे हैं। पाप की घनी काली घटाओं से घिरे इस विश्वाकाश में समय समय पर कहीं—कहीं कोई उज्जवल से नक्षत्र जरूर चमकते रहे है जो कुछ क्षण चमक कर पुनः अंधकार में विलीन हो जाते हैं और कालिमा बढ़ती ही जा रही है। संकीर्णता बढ़ती जा रही है! है कोई मार्ग? है कोई उदाहरण? अंधकार को विदीर्ण कर देना वाला सूर्य?

जी हाँ! अवश्य है!उसका परिचय देने से पहले एक संस्त उक्ति और उद्धृत करना चाहता हूँ : —

त्यजेदेकं कुलस्यार्थे, ग्रामस्यार्थे कुलं त्यजेत्।
ग्रामं जनपदस्यार्थे, आत्मार्थे पृथिवीं त्यजेत्।।

जब तक इस श्लोक के अंतिम चतुर्थांश का मर्म समझ में नहीं आता, तब तक शेष तीनों अंशों का दुरुपयोग होने की संभावना बनी रहती है। आत्मा के लिए पृथ्वी का भी त्याग किया जा सकता है—इस मर्म को जो समझ लेता है वह कभी भी अनुदात्तता की ओर नहीं जा सकता। इस संसार में पृथिवी के त्याग से बढ़कर त्याग क्या होगा?पृथिवी का त्याग आत्मा के लिए? आत्मा की रक्षा करने के लिए? आत्मा की हत्या न करने के लिए? अर्थात् आत्मा की पुकार को अनसुना न करने के लिए? सब आत्माओं में व्यापक एक ही आत्मा सब आत्माओं से हर कार्य से पहले संवाद करती है! हरेक आत्मा उस संवाद को मन, बुद्धि तक पहुँचाती है! जो उसे सुनकर सर्वव्यापक आत्मा पर विश्वास कर निर्णय लेता है, वह 'वसुधैव कुटुम्बकं' की भावना को प्राप्त कर उसे चरितार्थ करेगा और दूसरों को इसी भावना से आप्लावित भी! सूर्य की भाँति वह अज्ञान, अन्याय और अभाव के अन्धकार को विदीर्ण करेगा! तभी विश्व का कल्याण होगा। ऐसा ही एक सूर्य पाप की घनी कालिमा से ढँके विश्वपटल पर उदय हुआ था और अपने शरीर से भले ही नहीं रहा हो, किंतु अपने तित्व से आज भी चमक रहा है। उनके शरीर को समाप्त

करके दुष्टों ने सोचा था कि अंधकार का साम्राज्य कायम रहेगा। किंतु उस पुण्यात्मा का तित्व सर चढ़कर आज भी बोल रहा है, चमक रहा है, जिससे आज भी तमपिशाच घबराते हैं। चलो पहले आपको इस विभूति के एक तित्व से परिचय कराते हैं।

मथुरा के व्याकरणसूर्य से वेदों की कुंजी पाकर, वेदों के ईश्वरीय ज्ञान होने का निर्भ्रान्त बोध प्राप्त कर लगभग डेढ़ दशक तक घूम–घूम कर प्रकाश बिखेरने के बाद इस विभूति ने इस प्रकाश को सत्यार्थप्रकाश रूपी अक्षय प्रकाश के स्रोत में बदल दिया।

ऊपर जो बहुत लंबी चौड़ी चर्चा करके हमने निष्कर्ष निकाला कि झूठ से मानवता का अहित हुआ है। देखिए सत्यार्थप्रकाश की भूमिका में यह विभूति लगभग डेढ़ सौ वर्ष पूर्व लिखती है:– 'मिथ्या बात न रोकी जाय तो संसार में बहुत से अनर्थ प्रवृत्त हो जायें।'

अनर्थ की बहुत चर्चा हम ऊपर कर चुके हैं,संकीर्ण होते परिवार की भी और 'वसुधैव कुटुम्बकं' की नितान्त आवश्यकता की भी! यह विभूति सारे विश्व के हित को बिना किसी पक्षपात के करने की अपनी भावना सत्यार्थप्रकाश की भूमिका में व्यक्त करते हैं:–

'यद्यपि मैं आर्यावर्त्त देश में उत्पन्न हुआ और वसता हूँ, तथापि जैसे इस देश के मतमतान्तरों की झूठी बातों का पक्षपात न कर याथातथ्य प्रकाश करता हूँ, वैसे ही दूसरे देशस्थ वा मत वालों के साथ भी वर्त्तता हूँ। जैसा स्वदेश वालों के साथ मनुष्योन्नति के विषय में वर्त्तता हूँ, वैसा विदेशियों के साथ भी तथा सब सज्जनों को भी वर्त्तना योग्य है। क्योंकि मैं भी जो किसी एक का पक्षपाती होता तो जैसे आजकल के स्वमत की स्तुति, मण्डन और प्रचार करते और दूसरे मत की निन्दा, हानि और बन्ध करने में तत्पर होते हैं, वैसे मैं भी होता, परन्तु ऐसी बातें मनुष्यपन से बाहर हैं।''

विश्व मे प्रचलित मानव जनित सभी सम्प्रदायों में 'वसुधैव कुटुम्बकं' का अभाव ही यह प्रमाणित करता है कि ये ग्रंथ मानव जनित है, ईश्वरीय नहीं। अपने अनुयायियों के अलावा वे अन्य किसी भी मानव के कल्याण की कामना नहीं करते, वरन् उनके प्राणहरण तक की भावना रखते हैं। किन्तु यह विभूति सारी संकीर्णता से कोसों दूर वेदवन्दना करता हुआ सब जगह संसार, जगत या विश्वभर के उपकार की कामना करता है। मन्त्रार्थ में भी! सत्यार्थप्रकाश की भूमिका में ही संसार के त्रिविध पाप दूर करने की कामना है, तेरा–मेरा या इसका–उसका में परमात्मा को बांटने का पाप करने वालों को जगाता परमात्मा को किसी सम्प्रदायवालों का ही नहीं वरन् संसार का कल्याणकर्ता लिखते हैं: –

'भूमिका इस में तीन वार शान्तिपाठ का यह प्रयोजन है कि त्रिविध ताप अर्थात् इस संसार में तीन प्रकार के दुःख हैं–एक 'आध्यात्मिक' जो आत्मा शरीर में अविद्या, राग, द्वेष, मूर्खता और ज्वर पीड़ादि होते हैं। दूसरा 'आधिभौतिक' जो शत्रु, व्याघ्र और सर्पादि से प्राप्त होता है। तीसरा 'आधिदैविक' अर्थात् जो अतिवृष्टि, अतिशीत, अति उष्णता, मन और इन्द्रियों की अशान्ति से होता है। इन तीन प्रकार के क्लेशों से आप हम लोगों को दूर करके कल्याणकारक कर्मों में सदा प्रवृत्त रखिए। क्योंकि आप ही कल्याणस्वरूप, सब संसार के कल्याणकर्त्ता और धार्मिक मुमुक्षुओं को कल्याण के दाता हैं। इसलिए आप स्वयम् अपनी करुणा से सब जीवों के हृदय में प्रकाशित हूजिए कि जिस से सब जीव धर्म का आचरण और अधर्म को छोड़ के परमानन्द को प्राप्त हों और दुःखों से पृथक् रहैं।'

'जो मंगलकारी सब संसार का अत्यन्त कल्याण करने वाला है, उस परमात्मा को नमस्कार करना चाहिये।'

सामान्यजन यही जानते हैं कि फलित ज्योतिष भारतीय हिन्दुओं में ही है। मिन्तु इस विभूति की दूरदृष्टि में अरब के 'नजूमी', पश्चिम के 'एस्ट्रोलॉजर' और बायबिल–कुरान आदि की भविश्यवाणियाँ छुप न सकी। इसीलिए वे फलित ज्योतिष विषय को भी भूमिका में की गई अपनी प्रतिज्ञा के अनुरूप

वैश्विक परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत करते लिखते हैः –
'(प्रश्न) क्या जो यह संसार में राजा प्रजा सुखी दुःखी हो रहे हैं यह ग्रहों का फल नहीं है?
(उत्तर) नहीं, ये सब पाप पुण्यों के फल हैं।'

अग्निहोत्र तो सब हिन्दुओं में भी प्रचलित नहीं रहा है। इसके प्रति संकीर्ण दृष्टिकोण को चुनौती देते हुए महर्षि इसे भी संसार के सुख का कारण बताकर महर्षि मानो यज्ञ न करने वालों को चुनौती दे रहे हों कि क्या अग्निहोत्रकर्ता के यज्ञ से तुम्हारा उपकार न होगा? तुम्हें भी अग्निहोत्र करना चाहिए!
'अग्निहोत्र से वायु, वृष्टि, जल की शुद्धि होकर वृष्टि द्वारा संसार को सुख प्राप्त होना अर्थात् शुद्ध वायु का श्वास, स्पर्श, खान पान से आरोग्य, बुद्धि, बल, पराक्रम बढ़ के धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष का अनुष्ठान पूरा होना। इसीलिये इस को देवयज्ञ कहते हैं।'

संन्यासी की भाँति हरेक मत सम्प्रदाय में जीवनदानी, संसार के सुखों का त्याग कर देनेवाले होते हैं। जैन संत जैनों के, बौद्ध भिक्षु बौद्धों के, नन और पादरी ईसाईयों के और इसी तरह अपने अपने सम्प्रदायों की पुष्टि तक ही सीमित रहते हैं। किन्तु हमारी विभूति तो सन्यास को सभी सीमाओं से बाहर निकाल कर संसार के उपकार तक विस्तृत करती है–

''जिस पुरुष वा स्त्री को विद्या धर्मवृद्धि और सब संसार का उपकार करना ही प्रयोजन हो वह विवाह न करे। जैसे पञ्चशिखादि पुरुष और गार्गी आदि स्त्रियां हुई थीं।'

संन्यासियों को उचित है कि सदा सत्योपदेश शंकासमाधान, वेदादि सत्यशास्त्रें का अध्यापन और वेदोक्त धर्म की वृद्धि प्रयत्न से करके सब संसार की उन्नति किया करें।'

प्रत्येक मत और मानव को अपना मानने, संसार का भाग मानने की अपनी उदारता से ही संकीर्ण मनोवृत्ति वाले सन्यासियों को सन्यासी ही नहीं मानते लिखा हैः –

'सुधार करना तो दूर रहा, उस के बदले में संसार को बहका कर अधोगति को प्राप्त कराते और अपना प्रयोजन सिद्ध करते हैं। इसलिये इन को संन्यासाश्रम में नहीं गिन सकते किन्तु ये स्वार्थाश्रमी तो पक्के हैं। इस में कुछ सन्देह नहीं। जो स्वयं धर्म में चलकर सब संसार को चलाते हैं, जो आप और सब संसार को इस लोक अर्थात् वर्त्तमान जन्म में, परलोक अर्थात् दूसरे जन्म में स्वर्ग अर्थात् सुख का भोग करते कराते हैं। वे ही धर्मात्मा जन संन्यासी और महात्मा हैं।'

अरब से उठे चाचाजात मतों ने भारत सहित विश्व को बहुत पीड़ित किया, गुलाम बनाया, भयानक पाशविकता को भी भला कहला देने वाले अत्याचार किए। किन्तु वैश्विक दृष्टि धारक यह विभूति महर्षि मनु को उद्धृत कर लिखती हैः –
'आदानमप्रियकरं दानञ्च प्रियकारकम् ।अभीप्सितानामर्थानां काले युक्तं प्रशस्यते।

क्योंकिसंसार में दूसरे का पदार्थ ग्रहण करना अप्रीति और देना प्रीति का कारण है और विशेष करके समय पर उचित क्रिया करना और उस पराजित के मनोवाञ्छित पदार्थों का देना बहुत उत्तम है और कभी उस को चिड़ावे नहीं, न हँसी और ठट्ठा करे, न उस के सामने हमने तुझ को पराजित किया है ऐसा भी कहै, किन्तु आप हमारे भाई हैं इत्यादि मान्य प्रतिष्ठा सदा करे।'

सुदीर्घकाल तक विश्वगुरु रहने का दम्भ भरने वाले भारत पर अविद्यांधकार का दायित्व भी डालते हुए मूर्तिपूजा के दुष्परिणाम को विश्वभर के लिए हानिकारक बताते वे आगे लिखते हैः –
(प्रश्न) जैसे स्त्री की पाषाणादि मूर्ति देखने से कामोत्पत्ति होती है वैसी वीतराग शान्त की मूर्त्ति देखने से वैराग्य और शान्ति की प्राप्ति क्यों न होगी?
(उत्तर) नहीं हो सकती। क्योंकि उस मूर्त्ति के जड़त्व धर्म आत्मा में आने से विचारशक्ति घट जाती है। विवेक के विना न वैराग्य और वैराग्य के विना विज्ञान, विज्ञान के विना शान्ति नहीं होती। और जो कुछ

होता है सो उनके संग, उपदेश और उनके इतिहासादि के देखने से होता है क्योंकि जिस का गुण वा दोष न जानके उस की मूर्तिमात्र देखने से प्रीति नहीं होती। प्रीति होने का कारण गुणज्ञान है। ऐसे मूर्तिपूजा आदि बुरे कारणों ही से आर्यावर्त में निकम्मे पुजारी भिक्षुक आलसी पुरुषार्थ रहित क्रोड़ों मनुष्य हुए हैं। सब संसार में मूढ़ता उन्हीं ने फैलाई है। झूठ छल भी बहुत सा फैला है।'

संसारभर के निराशावादियों में आशा का संचार करते और मतैक्यता स्थापित कर विश्व के कल्याण करने को समुद्यत होने का आह्वान करते वे लिखते हैं: –

'(मत वाले) एक मत कभी नहीं हो सकता क्योंकि मनुष्यों के गुण, कर्म, स्वभाव भिन्न–भिन्न हैं।

(जिज्ञासु) जो बाल्यावस्था में एक सी शिक्षा हो, सत्यभाषणादि धर्म का ग्रहण और मिथ्याभाषणादि अधर्म का त्याग करें तो एकमत अवश्य हो जायें और दो मत अर्थात् धर्मात्मा और अधर्मात्मा सदा रहते हैं वे तो रहें। परन्तु धर्मात्मा अधिक होने और अधर्मी न्यून होने से संसार में सुख बढ़ता है और जब अधर्मी अधिक होते हैं तब दुःख। जब सब विद्वान् एक सा उपदेश करें तो एकमत होने में कुछ भी विलम्ब न हो।'

सत्यार्थप्रकाश के बारहवें समुल्लास में बौद्ध मत द्वारा संसार को दुःखमय मानने की मिथ्या धारणा की समीक्षा करते वे लिखते हैं: –

'जो सब संसार दुःखरूप होता तो किसी जीव की प्रवृत्ति न होनी चाहिये। संसार में जीवों की प्रवृत्ति प्रत्यक्ष दीखती है इसलिये सब संसार दुःखरूप नहीं हो सकता किन्तु इस में सुख दुःख दोनों हैं और जो बौद्ध लोग ऐसा ही सिद्धान्त मानते हैं तो खानपानादि करना और पथ्य तथा ओषध्यादि सेवन करके शरीर रक्षण करने में प्रवृत्त होकर सुख क्यों मानते हैं? जो कहैं कि हम प्रवृत्त तो होते हैं परन्तु इस को दुःख ही मानते हैं तो यह कथन ही सम्भव नहीं। क्योंकि जीव सुख जान कर प्रवृत्त और दुःख जान के निवृत्त होता है। संसार में धर्मक्रिया, विद्या, सत्संगादि श्रेष्ठ व्यवहार सुखकारक हैं, इन को कोई भी विद्वान् दुःख का लिंग नहीं मान सकता, विना बौद्धों के।'

चाचाजात मतों में मुर्दों को गाड़ने की प्रक्रिया को और अन्यत्र भी जलदाग या वायुदाग को भी संसार के लिए हानिकारक बताते हुए और उनके संदेहों की विस्तार से निवृत्ति करते हुए हमारी विभूति लिखती हैं: –

'२७–सो आप हमारी समाधिन में से चुन के एक में अपने मृतक को गाड़िये जिस तें आप अपने मृतक को गाड़ें। –तौ0 उत्प० पर्व० २३। आ० ६।।

(समीक्षक) मुर्दों के गाड़ने से संसार को बड़ी हानि होती है क्योंकि वह सड़ के वायु को दुर्गन्धमय कर रोग फैला देता है।

(प्रश्न) देखो! जिससे प्रीति हो उसको जलाना अच्छी बात नहीं और गाड़ना जैसा कि उसको सुला देना है इसलिए गाड़ना अच्छा है।

(उत्तर) जो मृतक से प्रीति करते हो तो अपने घर में क्यों नहीं रखते? और गाड़ते भी क्यों हो? जिस जीवात्मा से प्रीति थी वह निकल गया, अब दुर्गन्धमय मट्टी से क्या प्रीति?और जो प्रीति करते हो तो उसको पृथिवी में क्यों गाड़ते हो क्योंकि किसी से कोई कहे कि तुझ को भूमि में गाड़ देवें तो वह सुन कर प्रसन्न कभी नहीं होता। उसके मुख आँख और शरीर पर धूल, पत्थर, ईंट, चूना डालना, छाती पर पत्थर रखना कौन सा प्रीति का काम है?और सन्दूक में डाल के गाड़ने से बहुत दुर्गन्ध होकर पृथिवी से निकल वायु को बिगाड़ कर दारुण रोगोत्पत्ति करता है। दूसरा एक मुर्दे के लिए कम से कम ६ हाथ लम्बी और ४ हाथ चौड़ी भूमि चाहिए। इसी हिसाब से सौ, हजार वा लाख अथवा क्रोड़ों मनुष्यों के लिए कितनी भूमि व्यर्थ रुक जाती है। न वह खेत, न बगीचा, और न वसने के काम की रहती है। इसलिये सब से बुरा

गाड़ना है, उससे कुछ थोड़ा बुरा जल में डालना, क्योंकि उसको जलजन्तु उसी समय चीर फाड़ के खा लेते हैं परन्तु जो कुछ हाड़ वा मल जल में रहेगा वह सड़ कर जगत् को दुःखदायक होगा। उससे कुछ एक थोड़ा बुरा जंगल में छोड़ना है क्योंकि उसको मांसाहारी पशु पक्षी लूंच खायेंगे तथापि जो उसके हाड़, हाड़ की मज्जा और मल सड़ कर जितना दुर्गन्ध करेगा उतना जगत् का अनुपकार होगा, और जो जलाना है वह सर्वोत्तम है क्योंकि उसके सब पदार्थ अणु होकर वायु में उड़ जायेंगे।

(प्रश्न) जलाने से भी दुर्गन्ध होता है।

(उत्तर) जो अविधि से जलावे तो थोड़ा सा होता है परन्तु गाड़ने आदि से बहुत कम होता है। और जो विधिपूर्वक जैसा कि वेद में लिखा है–वेदी मुर्दे के तीन हाथ गहिरी, साढ़े तीन हाथ चौड़ी, पांच हाथ लम्बी, तले में डेढ़ हाथ बीता अर्थात् चढ़ा उतार खोद कर शरीर के बराबर घी उसमें एक सेर में रत्ती भर कस्तूरी, मासा भर केशर डाल न्यून से न्यून आध मन चन्दन अधिक चाहें जितना ले, अगर–तगर कपूर आदि और पलाश आदि की लकड़ियों को वेदी में जमा, उस पर मुर्दा रख के पुनः चारों ओर ऊपर वेदी के मुख से एक–एक बीता तक भर के उस घी की आहुति देकर जलाना लिखा है। उस प्रकार से दाह करें तो कुछ भी दुर्गन्ध न हो किन्तु इसी का नाम अन्त्येष्टि, नरमेध, पुरुषमेध यज्ञ है। और जो दरिद्र हो तो बीस सेर से कम घी चिता में न डालें, चाहे वह भीख मांगने वा जाति वाले के देने अथवा राज से मिलने से प्राप्त हो परन्तु उसी प्रकार दाह करे। और जो घृतादि किसी प्रकार न मिल सके तथापि गाड़ने आदि से केवल लकड़ी से भी मृतक का जलाना उत्तम है क्योंकि एक विश्वा भर भूमि में अथवा एक वेदी में लाखों क्रोड़ों मृतक जल सकते हैं। भूमि भी गाड़ने के समान अधिक नहीं बिगड़ती और कबर के देखने से भय भी होता है। इससे गाड़ना आदि सर्वथा निषिद्ध है।।२७।।'

ईसाई मत की समीक्षा करते हुए बायबिल में स्वर्ग में भी युद्ध के वर्णन को उद्धृत कर वे संकर्ण मानसिकता वालों को मानो जगाते हुए चेतावनी देते हैंः –

'(समीक्षक) जो कोई ईसाइयों के स्वर्ग में जाता होगा वह भी लड़ाई में दुःख पाता होगा। ऐसे स्वर्ग की यहीं से आशा छोड़ हाथ जोड़ बैठ रहो। जहां शान्तिभंग और उपद्रव मचा रहे वह ईसाइयों के योग्य है।।'

चाचाजात मतों के शैतान की परिकल्पना से विश्व को बहकाकर भ्रमित करने की कल्पना को उद्धृत कर उसपर प्रहार करते लिखा हैः –

'११८–और वह बड़ा अजगर गिराया गया। हां ! वह प्राचीन सांप जो दियाबल और शैतान कहावता है जो सारे संसार का भरमानेहारा है।।–यो० प्र० प० १२। आ० ६।।

(समीक्षक) क्या जब वह शैतान स्वर्ग में था तब लोगों को नहीं भरमाता था?और उसको जन्म भर बन्दीगृह में घिरा अथवा मार क्यों न डाला? उसको पृथिवी पर क्यों डाल दिया? जो सब संसार का भरमाने वाला शैतान है तो शैतान को भरमाने वाला कौन है? यदि शैतान स्वयं भर्मा है तो शैतान के विना भरमनेहारे भर्मेंगे और जो भरमानेहारा परमेश्वर है तो वह ईश्वर ही नहीं ठहरा। विदित तो यह होता है कि ईसाइयों का ईश्वर भी शैतान से डरता होगा क्योंकि जो शैतान से प्रबल है तो ईश्वर ने उसको अपराध करते समय ही दण्ड क्यों न दिया?जगत् में शैतान का जितना राज है उसके सामने सहस्रांश भी ईसाइयों के ईश्वर का राज नहीं। इसीलिये ईसाइयों का ईश्वर उसे हटा नहीं सकता होगा। इससे यह सिद्ध हुआ कि जैसा इस समय के राज्याधिकारी ईसाई डाकू चोर आदि को शीघ्र दण्ड देते हैं वैसा भी ईसाइयों का ईश्वर नहीं। पुनः कौन ऐसा निर्बुद्धि मनुष्य है जो वैदिक मत को छोड़ पोकल ईसाई मत स्वीकार करे?।।११८।।'

अपने स्वार्थ के लिए विश्व को सांप्रदायिकता के जाल में जकड़ कर संकीर्ण और दुःखमय